Hill Quest: A Multidisciplinary, National Peer-Reviewed Journal
ISSN 2454-3144 | Volume 10, Issue 01, January-June 2023
http://hillquest.pratibha-spandan.org
© The Author(s) 2023

शिक्षा नीति और बेनीपुरी जी का साहित्य

MEENU PAREEK

Research Associate, 2501, Gautam Budha, Vanasthali Vidyapeeth

भूमिका

शिक्षा की व्यवस्था हो चाहे व्यवस्था की शिक्षा दोनों ही स्थिति में भाषा का अपना महत्त्व होता है। भाषा के बिना सब व्यर्थ है और भाषा में भी मातृभाषा का महत्त्व स्वीकार किया गया है। हिन्दी साहित्य की ओर दृष्टि डालते है तो भारतीय नवजागरण के अग्रदूत के रूप में भारतेन्दु हरिशचन्द्र है जिन्होंने भाषा के महत्त्व को समझाते हुए लिखा है कि -

निज भाषा उन्नति अहै, सब उन्नति को मूल

बिन निज भाषा ज्ञान के, मिटत न हिय के सूल।।

इस निज भाषा से तात्पर्य लेखक का भारतीय भाषाओं से रहा। आगे लिखते हैं कि -

'अंग्रेजी पढ़के जदपि, सब गुण होत प्रवीण,

पै निज भाषा ज्ञान के रहत हीन के हीन।।

हम अन्य भाषाओं का ज्ञान प्राप्त कर प्रवीण हो सकते हैं किन्तु बिना अपनी भाषा का महत्त्व समझे हम सांस्कृतिक व व्यावहारिक दृष्टि से हीन ही रहेंगे। भारतेन्दु ने मातृभाषा में शिक्षा की अवधारणा को साकार करने का अनुग्रह किया है। इसी कविता में वे लिखते हैं कि -

और एक अति लाभ यह, या में प्रगट लखात,

निज भाषा में कीजिए, जो विद्या की बात।

अतः शिक्षा के प्रारम्भिक स्तर पर मातृ भाषा में शिक्षा की वकालत करते हैं तथा बिना अपनी भाषा के ज्ञान के सब कुछ व्यर्थ मानते हैं। यदि व्यावहारिक स्तर पर हम दृष्टि डाले तो देख सकते हैं कि मातृभाषा का परिचय बालक घर पर पारिवारिक सदस्यों से प्राप्त करता है इसी अवस्था में उसमें सीखने व समझने की क्षमता का विकास हो जाता है।

भारत में पहली शिक्षा नीति में भी त्रि-भाषा शिक्षा व्यवस्था की परिकल्पना की गई थी किन्तु राजनीतिक कारणों से यह व्यवस्था अपने साकार रूप में नहीं आ पाई। वर्ष 2020 में जारी शिक्षा नीति ने प्रधानमंत्री व शिक्षा मंत्री की प्रेरणा से मातृभाषा के महत्त्व को स्थापित किया तथा शिक्षा में मातृभाषा की अनिवार्यता को महत्त्व दिया। जिसके फलस्वरूप हिन्दी के प्रभुत्व को स्थापित करने का प्रयास किया गया। भारतीय भाषाओं को महत्त्व दिया जायेगा तभी हिन्दी व उनका महत्त्व स्थापित होगा तथा विदेशी भाषाओं का आधिपत्य समाप्त हो सकता है।

बेनीपुरी जी ने भी अपने निबंधों में शिक्षा की अवधारणा को स्पष्ट करने का प्रयास किया है। इन्होंने अपने निबन्ध में भाषा के निर्माण तथा उसमें मानवीय मूल्यों के समावेश की वकालत की है। वे लिखते हैं कि मेरे द्वारा भी मातृ भाषा को अपनाया गया है -

वे पाठ्यक्रम में लोकभाषा अर्थात् मातृभाषा को अपनाने की वकालत करते है। वे लिखते हैं कि भाषा किसी भी रूप में जीवित रहे किन्तु मातृभाषा को स्वरूप को जीवित रखने व उसके संरक्षण, हेतु प्रयास किये जाने चाहिए।

Hill Quest: A Multidisciplinary, National Peer-Reviewed Journal
ISSN 2454-3144 | Volume 10, Issue 01, January-June 2023
http://hillquest.pratibha-spandan.org
© The Author(s) 2023

बेनीपुरी जी ने इसी निबन्ध में मैथिली कवि विद्यापति की उक्ति का उदाहरण देते हुए स्पष्ट किया है कि लोक भाषा के महत्व को कभी कम नहीं माना जा सकता, भाषा के माध्यम से हमारी परम्परा हमारी, संस्कृति, हमारी विचारधारा निरन्तर गतिशील है वे लिखते हैं कि जब संस्कृत का भाषा के रूप में महत्त्व कम हुआ तब ही देशी या लोक भाषाओं का विकास हुआ। साथ ही कवि विद्यापति के मत का समर्थन करते हुए समझाया कि हृदय की कोमल भावनाओं का प्रदर्शन लोक-भाषा द्वारा आसानी से किया जा सकता है, अतः लोक भाषा कोमल भावनाओं को व्यक्त करने का सबसे सरल माध्यम रहा है और आज भी है।

उन्होंने ने लोकभाषा के महत्त्व को समझाते हुए उसे संस्कृत से श्रेष्ठ माना है। वे लिखते हैं - 'संस्कृत भाषा एक तो सबको आती नहीं, फिर रस के मर्म की अभिव्यक्ति उसमें शक्य नहीं; इधर देशी भाषा सबको मीठी लगती है, इसलिए मैंने उसे ही अपनाया है।'

बेनीपुरी जी ने अपने निबन्धों में लोकभाषा के संरक्षण हेतु उचित मार्गदर्शन भी किया है। वे लिखते हैं कि प्रत्येक भाषा के संरक्षण हेतु उचित प्रयास किये जाने चाहिए, क्योंकि प्रान्तीय भाषाओं का अस्तित्व लोकभाषा पर निर्भर है। वहीं उसे जीवन-प्रदान करती है और इस कारण प्रारम्भिक स्तर पर पाठ्यक्रम में प्रान्तीय भाषाओं का स्थान दिया जाना चाहिए। जिससे क्षेत्रीय रचनाकारों को प्रोत्साहन मिल सकें। उनकी रचनाओं को भी पाठ्यक्रम में स्थान दिया जायें। वे इसके संरक्षण का पुरजोर समर्थन करते हैं कि - 'मैं चाहता हूँ, कि हिन्दी के पाठ्य-ग्रन्थों में इन प्रान्तीय भाषाओं के भी कुछ अंश दिए जाएँ। प्राचीन साहित्य के नाम पर जब हम पाठ्य ग्रन्थों में विद्यापति को स्थान देते हैं, तो मेरी समझ में नहीं आता है कि क्यों उसमें दिनकर, मनोरंजन के साथ ही बद्रीनाथ झा जी या ईशनाथ झा की कविता के नमूने नहीं दिए जाएँ? गोविन्ददास, उमापति, हर्षनाथ, मनबोध और चन्दा झा की रचनाओं को बिहार के पाठ्य-ग्रन्थों में स्थान नहीं दिया जाना तो मुझे अनर्थ जँचता है। राष्ट्रभाषा के रूप में हिन्दी जिए; तो लोकभाषा के रूप में मैथिली को भी जीवित रहने का हक है।'

बेनीपुरी जी ने प्रारम्भिक पाठ्य-पुस्तकों में लोक भाषा को स्थान दिये जाने का प्रबल समर्थन किया। साथ ही यह आग्रह भी किया कि हिन्दी के प्रचार-प्रसार हेतु प्रयास किया जाना आवश्यक है। लेकिन मातृभाषा, लोकभाषा का संरक्षण भी आवश्यक है नहीं तो लोकभाषा मृत प्रायः हो जायेगी इसका नाम केवल इतिहास में ही होगा। वर्तमान समय में देखा जा सकता है कि प्रशासन द्वारा व साहित्यकारों द्वारा लोकभाषा की उन्नति हेतु प्रयास किये जा रहे हैं। प्रारम्भिक शिक्षा मातृभाषा में दिये जाने पर बल दिया जा रहा है।

इसके साथ ही बेनीपुरी जी ने साहित्यकारों से अपेक्षा भी की है कि लोकभाषा के महत्त्व को समझने और उसे साहित्य की भाषा बनाये। वे साहित्यिक भाषा में लोकभाषा की उपादेयता के विषय में लिखते हैं कि 'शहरों के शब्दों में बनावटी रूप पर मैंने गाँवों के बोलों भोलेपन को हमेशा तरज़ीह दी है! ग्रामीण शब्दों और मुहावरों का मैंने प्रचुर प्रयोग किया है। गाँव के वे अछूते, सूखे, सुथरे शब्द कितनी जान है उसमें, कितना जोर है उनमें-वे कितने सुन्दर हैं, वे कितने बलवान है! एक-एक शब्द एक पूरे चित्र का प्रतिनिधित्व करता है! एक मुहावरा - एक पूरी दुनिया छिपी हैं उनमें।'

उन्होंने अपने निबन्धों में लोकभाषा का साहित्य में महत्त्व को सिद्ध किया ही है साथ ही जनजीवन में भी इसके महत्व को उजागर किया हैं। उन्होंने लोकभाषा के संरक्षण का समर्थन कर इसकी आवश्यकता को भली प्रकार से स्पष्ट किया है। जिससे इसका विकास हो प्रत्येक व्यक्ति को अपनी भाषा का बोध हो जिसके फलस्वरूप लोकभाषा को जीवनदान मिल सकें। महात्मा गाँधी ने 5 जुलाई सन् 1928 में 'यंग इंडिया' में भारतीय भाषाओं को लेकर टिप्पणी की थी कि विदेशी भाषा से हमें मुक्ति पाना चाहिए। उनका यह विचार चिन्तन का विषय था। जिसका पालन हमने नहीं किया। गाँधी जी का मानना था - 'राष्ट्रभाषा भाषा के बिना राष्ट्र गूंगा है। राष्ट्र का संविधान ,राष्ट्रध्वज, राष्ट्रगीत तथा राष्ट्रभाषा, राष्ट्र का गौरव, प्रतिष्ठा आदि के प्रतीक हैं। इन्हें कदापि विवाद के

Hill Quest: A Multidisciplinary, National Peer-Reviewed Journal
ISSN 2454-3144 | Volume 10, Issue 01, January-June 2023
http://hillquest.pratibha-spandan.org
© The Author(s) 2023

घेरे में नहीं रखना चाहिए परन्तु आज केवल राष्ट्रभाषा पर ही नहीं भारतीय सभ्यता की गर्दन पर भी विदेशी संस्कृति की तलवार लटक रही है। जिसका सबसे अधिक प्रभाव हमारी एकता पर पड़ रहा है। भारत की एकता के लिए हिन्दी का अधिक से अधिक प्रचार और प्रसार होना चाहिए। वह भी अन्य क्षेत्रीय, प्रादेशिक भाषाओं को किसी प्रकार की हानि पहुँचाकर नहीं बल्कि उनकी वृद्धि और समृद्धि की कामना करते हुए।'

जहाँ महात्मा गाँधी राष्ट्रभाषा को प्रतिष्ठा का प्रतीक मानते है और इसकी उन्नति से ही देश की समृद्धि की कामना करते है। वही विद्यानिवास मिश्र अपने निबन्ध में कहते हैं कि 'राष्ट्रभाषा बोलने वालों की संख्या अपेक्षाकृत बड़ी होती है। मुख्य अंतर यह है कि राष्ट्रभाषा के प्रति की गयी निष्ठा से उद्भूत होती है। दूसरे शब्दों में भाषा राष्ट्रभाषा बनती है, संख्या के बल पर नहीं, भाषा में निहित सांस्कृतिक सम्पदा के बल पर भी उतनी नहीं, वह राष्ट्रभाषा अपने बोलने वालों की निष्ठा के बल पर, जिस भाषा पर समस्त राष्ट्र गर्व करता है, जिस भाषा की प्रतिष्ठा को प्रत्येक राष्ट्रवासी राष्ट्र की प्रतिष्ठा का पर्यार्य मानता है, जिस भाषा के मूल्य को अपने मानवीय मूल्यों में सर्वप्रमुख स्थान दिया जाता है, वहीं भाषा राष्ट्रभाषा होती है।'

अतः मानवीय मूल्यों का संरक्षण राष्ट्रभाषा के महत्त्व को समझकर ही किया जा सकता है। रामवृक्ष बेनीपुरी ने अपने वैचारिक-निबन्ध संग्रह 'वन्दे वाणी विनायकौं में राष्ट्रभाषा के महत्त्व के समझाने तथा राष्ट्रभाषा की रक्षा हेतु कुछ महत्त्वपूर्ण सुझाव दिये हैं। बेनीपुरी जी लिखते हैं कि राष्ट्रभाषा के महत्त्व को स्थापित करने के लिए हमें उच्च शिक्षा में हिन्दी माध्यम को अपनाना होगा। जब ही इसका महत्त्व स्थापित हो सकेगा। उच्च शिक्षा में हिन्दी माध्यम अपनाने से इस कार्य में बहुत मदद मिल सकती है। जब चीन, जापान, जर्मनी, फ्रांस में उनकी भाषा में ही उच्च शिक्षा दी जाती है तो हमें इसमें पीछे क्यों रहें? बेनीपुरी जी का यह मत हैं कि -

'हिन्दी भारत की सर्वप्रिय जनभाषा और साधुभाषा रही है। इसके इन्हीं गुणों ने भिन्न भाषाभाषियों की श्रद्धा और भक्ति इसे दिलाई। स्वामी दयानन्द, महात्मागाँधी, लोकमान्य तिलक, केशवचन्द्र सेन आदि अहिन्दीभाषियों ने इसे राष्ट्रभाषा के रूप में ग्रहण किया और अपने व्यक्तित्व का बल देकर इसे परवान चढ़ाया।

आज भी अहिन्दी क्षेत्रों में हिन्दी की ध्वजा अहिन्दी भाषा ही उड़ा रहे हैं।' अतः हिन्दी को समृद्ध करने के लिए सबसे पहले हिन्दी प्रान्त के लोगों की हिन्दी सिखलाना चाहिए, तब तत्पश्चात् के अहिन्दी भाषी क्षेत्र में हिन्दी के प्रचार के लिए जोर देना चाहिए तथा भाषा को पण्डितों की शास्त्रीय भाषा के आसमान से उतार जनता की सरल-सुगम भाषा बनाना होगा। लेखक गाँधी जी के भाषा के प्रति विचारों को स्पष्ट करते हुए लिखते हैं कि -

'गाँधीजी के शब्दों में ''हिन्दी को सरल बनाओ, सुगम, सुबोध बनाओ।'' आज हम उसे कुछ पंडितों की भाषा, कुछ शासकों की भाषा बनाने पर तुले हैं। क्या इस रूप में हिन्दी जीवित रह सकेगी? वाल्मीकि और व्यास की भाषा जब जनता से दूर होकर जी नहीं सकी, तो फिर हमारी-आपकी भाषा क्या खाक जिन्दा रह सकेगी।' अतः बेनीपुरी जी कहते हैं कि जब तक हम अपनी भाषा का महत्त्व नहीं समझेंगे तब तक हमारी भाषा उपेक्षित रहेगी। इसके महत्त्व को स्थापित करने के लिए इसे जनता की भाषा बनाना होगा।

'मैथिली साहित्य' निबन्ध के अन्तर्गत-बेनीपुरी जी लिखते हैं कि हमारी प्राथमिक शिक्षा व्यवस्था, माध्यमिक शिक्षा व उच्च शिक्षा का माध्यम हिन्दी भाषा रहे, तभी इसका प्रचार-प्रसार हो सकता है। जब इसका प्रचार-प्रसार होगा तभी इसके महत्त्व की ओर सभी का ध्यानाकर्षित होगा। हिन्दी भाषा देश में एकता स्थापित करती है और प्रान्तीयता की प्रवृत्ति को रोकती है। 'नव निर्माण और साहित्य-सृष्टा' निबन्ध के अन्तर्गत बेनीपुरी जी राष्ट्रभाषा का स्थापित करने में साहित्यकारों, सरकारों व जनता की भूमिका को स्पष्ट किया है। वे लिखते हैं कि राष्ट्रभाषा का महत्त्व कम होता जा रहा है। इसका प्रमुख कारण शासन व सरकारों की कार्यशैली

Hill Quest: A Multidisciplinary, National Peer-Reviewed Journal
ISSN 2454-3144 | Volume 10, Issue 01, January-June 2023
http://hillquest.pratibha-spandan.org
© The Author(s) 2023

है। उन्होंने कहा है कि सरकार की छाया भाषा पर जितनी कम पड़े उतना ही भाषा के लिए अच्छा है, जब शासन व्यवस्था से जुड़े व्यक्ति भाषा पर अधिकार करना चाहते हैं तो भाषा शासकों की चारण मात्र हो जाती है। जैसा कि रूस में हुआ।

इसी निबन्ध में बेनीपुरी जी लिखते हैं कि राष्ट्रभाषा व राज्यभाषा की चर्चा कर उसकी भिन्न-भिन्न प्रकार से व्याख्या करके भाषा के महत्त्व को कम किया जा रहा है। पहले देश के लिए भाषा का निर्माण किया जा रहा था। अब राज्यों के नाम पर दूसरी भाषा निर्मित की जा रही है और हर भाषा को सीखने का दबाब जनता पर डाला जा रहा है। इसके फलस्वरूप यदि भाषा का आधार और भाव विकृत हो रहे हो तो इससे क्या फर्क पड़ता है? शासक वर्ग का कार्य तो नव भाषा का निर्माण है वे लिखते हैं कि -

'यदि भाषा नहीं सीखोगे तो भारत में रहने का अधिकार नहीं है। भाषा में परिवर्तन प्रयोग से उत्पन्न विवाद से भाषा का महत्त्व कम किया जा रहा है। इसमें सबसे बड़ी मौत हो रही है, हिन्दी वालों की जो अन्य भाषा-भाषी हैं, उन्हें तो सीखना था ही, 'क' नहीं सीखा 'ख' सीख लिया। लेकिन जिन्होंने क' सीख रखा था उन्हें कहा जा रहा है, उस 'क' को भूल जाओ और इस 'ख' को 'क' मानकर आगे बढ़ो।'

बेनीपुरी जी 'राष्ट्रभाषा बनाम राजभाषा' निबन्ध में लिखते हैं कि सरकारों द्वारा या शासन व्यवस्था में सम्मिलित कुछ स्वार्थी व्यक्तियों द्वारा भाषा का महत्त्व कम करने का षड़यन्त्र किया जा रहा है। वे लिखते हैं कि 'प्रान्तीय भाषाओं को समर्थन देकर हिन्दी भाषा को समाप्त करने का प्रयास किया जा रहा है। भाषा को क्षेत्रीय प्रान्तों के आधार पर बाँटा जा रहा है। हिन्दी क्षेत्र की एकता को कमजोर करने के लिए स्थानीय बोलियों को प्रोत्साहन दिया जा रहा है लेखक प्रश्न करते हैं हिन्दी की एकता तोड़ने पर क्या हिन्दी जीवित रह पायेगी, उसका स्थान कहाँ होगा, राष्ट्रभाषा का महत्त्व स्वयं सिद्ध हो पायेगा? बेनीपुरी जी पाठकों के मध्य एक वैचारिक प्रश्न रखते हैं कि भाषा के आधार पर सरकारों का निर्माण, भाषा के आधार पर प्रान्तों का निर्माण इनके द्वारा क्या हमारी भाषा का मूल स्वरूप जीवित रह पायेगा?

भाषिक एकता जिसकी व्याख्या हमारे सांस्कृतिक तत्त्वों में होती है उसका क्या होगा। वे लिखते हैं कि हमारी हिन्दी को बदला जा रहा है किन्तु हमें उसके महत्त्व को पुनः स्थापित करने के लिए भाषा को पुनः पढ़ना होगा उसका अनुवाद करना होगा। आज के परिवेश पर दृष्टि डालें तो हम देखते हैं कि 'एक ऐसी भाषा गढ़ी जा रही है जिसे हिन्दी-भाषी जनता भी नहीं समझ सकें। आज हिन्दी भाषी जनता कुछ षड़यन्त्रियों में कुचक्रों में पड़कर क्षेत्रीय भाषाओं के नारे लगा रही है, उसमें हिन्दी का वर्तमान स्वरूप भी सहायक बन रहा है। नए पारिभाषिक शब्द बनाने हो, उसका आधार संस्कृत हो, इसे कौन नहीं स्वीकार करेगा। किन्तु आज तो साधारण जनों में बहुप्रचलित शब्दों को भी विदेशी कहकर हटाया जा रहा है नतीजा यह है कि हिन्दी भाषा दिन-दिन जनता से दूर की जा रही है, और जो भाषा जनता से दूर हुई: क्या वह राज्य भाषा बनकर भी जी सकती है?

लेखक ने अपने निबन्धों में लिखा है कि भाषा का निर्माण जनता द्वारा होता है। हजारों शब्द हमारे शब्दकोश में है तो हमें नयी भाषा की क्या आवश्यकता है। हिन्दी को राष्ट्रभाषा बनाने के प्रयास में उसके महत्त्व को कम किया जा रहा है वे लिखते हैं कि - 'हमें और सरकार को समझ लेना है कि भाषा या साहित्य का निर्माण सेक्रेटेरिएट में नहीं किया जा सकता।'

बेनीपुरी जी लिखते हैं कि राष्ट्रभाषा का महत्त्व तब सिद्ध होगा जब वह जनता की भाषा होगी, क्योंकि भाषा का निर्माण सरकारी कार्यालयों में नहीं हो सकता भाषा तो जनता का स्वर है भाषा जनता की आत्मा है वे लिखते हैं कि 'भाषा गढ़ी जाती है जनता की जिह्वा पर, कुछ ऊँचे वैज्ञानिक शब्दों को छोड़ दीजिए तो हजारों लाखों शब्द हमारे देहातों में भरे पड़े हैं - हमारे किसान, बुनकर, लोहार, बढ़ई, मल्लाह आदि टेक्निकल शब्दों का इतना बड़ा भंडार अपने पास रखे हुए हैं कि उन्हें उनसे लेकर हम अपनी भाषा को बहुत कुछ सम्पन्न बना सकते हैं किन्तु हम उनकी ओर ध्यान न देकर अंग्रेजी और संस्कृत के कोशों के भ्रमजाल में पड़े हैं।'

Hill Quest: A Multidisciplinary, National Peer-Reviewed Journal
ISSN 2454-3144 | Volume 10, Issue 01, January-June 2023
http://hillquest.pratibha-spandan.org
© The Author(s) 2023

लेखक कहते हैं कि आमजन की भाषा को स्वीकार न करके हम भाषा के महत्त्व को कम कर रहे है। हम पांडित्य प्रदर्शन तथा पाश्चात्य प्रभाव के फलस्वरूप भाषा के मूल तथा स्वाभाविक रूप का विकृत करने पर तुले है हम यह भूल गये है कि हमारे अस्तित्व का मूल आधार लोक व लोकभाषा है जिससे हमारी भाषा के सुरक्षित व संरक्षित है।

प्रायः हम भाषा का निर्माण जनता के द्वारा ही मानते हैं किन्तु इसमें बदलाव आने का कारण भी जनता द्वारा नव निर्वाचित प्रतिनिधि ही होते है वे लिखते हैं कि 'भाषा जनता की होती है किन्तु जब जनता का प्रतिनिधि शासनारूढ़ हो जाता हैं तो उसमें अहंकार आ जाता है और वह जनता की भाषा का अनुकरण नहीं करता बल्कि वह अपना रहन-सहन भाषा-भूषा जनता पर आरोपित करना चाहते है।

अतः यह स्पष्ट है कि आरोपित भाषा द्वारा राष्ट्रभाषा का महत्त्व किस प्रकार स्थापित हो सकता है। यदि भाषा सरल व सहज नहीं है तो वह जनभाषा के रूप में स्वीकार नहीं की जा सकती। वे व्यंग्य करते हैं कि साहित्यकार संस्कृतनिष्ठ भाषा अपना रहे हैं उसमें अध्ययन-अध्यापन करवा रहे हैं, किन्तु वह आम भाषा के रूप में महत्त्व प्राप्त नहीं कर सकती वह तो केवल गुरू-शिष्य तक ही सीमित रह पायेगी।

इसी प्रकार वे 'सभी भारतीय भाषाओ' की जय' निबन्ध में लिखते हैं कि 'सभी भारतीय भाषाओं का विकास ऐतिहासिक कारणों से हुआ है और वे इस प्रकार विकसित हो चुकी है कि उनके अनिष्ट की जरा भी बात सोचना देश की प्राणदायिनी नसों पर प्रहार करना होगा। हमारे देश की वाटिका में तरह-तरह के फूल खिले हैं, सबके अलग रंग है, रंग की अलग गन्ध है। इन रंगों और गन्धों के कारण ही हमारी यह वाटिका इतनी रमणीय है, मनोरम है। हमें फूलों की हर जड़ में जल देना है। स्रोत का जल, आदर का जल, श्रद्धा का जल!' वे लिखते हैं कि हमें सभी भारतीय भाषाओं का सम्मान करना होगा तभी हम अपनी भाषा, संस्कृति व विचारधारा की रक्षा कर पायेंगे। प्रान्तों के आधार पर भाषिक विवाद की अपेक्षा हमें भाषिक महत्त्व को समझना होगा।

भाषा के महत्त्व व स्वरूप को स्पष्ट करते हुए बेनीपुरी जी लिखते हैं कि हमारी भाषा का महत्त्व राजनेताओं द्वारा ही नहीं समझा जा रहा है। इसी निबंध में लिखते हैं कि हमारे कितने राजनेता शुद्ध हिन्दी बोल व लिख सकते हैं वह विशेष रूप से बिहार की चर्चा करते हैं और कहते हैं कि 'बिहार में ऐसे कितने मिनिस्टर है जो अपने आदेश शुद्ध हिन्दी में लिख पाते हैं।'

अतः हमें भाषा का महत्त्व स्थापित करना है तो सर्वप्रथम हिन्दी भाषी प्रान्तों के प्रशासकों, सचिवों कर्मचारियों को अच्छी हिन्दी बोलने व काम करने के लिए प्रेरित करना होगा, तब ही अहिन्दी भाषी क्षेत्रों में हिन्दी का महत्त्व स्थापित कर पायेंगे। जब सभी भाषाओं के शब्दों को खुले रूप से हिन्दी में स्वीकार किया जायेगा। जिसके फलस्वरूप भाषा की शब्दावली विस्तृत हो सकेगी तथा भाषा का महत्त्व व इसके स्वरूप को सभी द्वारा स्वीकार किया जायेगा।

बेनीपुरी जी लिखते हैं कि यदि हमें भाषा के महत्त्व को स्थापित करना है तो हमें प्रादेशिक भाषाओं पर हिन्दी अनिवार्यता समाप्त करनी होगी, यदि हम भाषा की अनिवार्यता समाप्त करते हैं तो हम स्वयं ही अपनी भाषा के शत्रु हैं। वे लिखते हैं कि - 'हिन्दी को उन क्षेत्रों से ही सन्तुष्ट होना पड़ेगा, जो ये प्रादेशिक भाषाएँ उसे राजी-खुशी दें। यदि आज किसी कारण से वे हिन्दी के क्षेत्र को नितान्त ही परिमित कर देना चाहें, तो हमें यह सादर स्वीकार करना चाहिए। इन प्रादेशिक भाषाओं की शुभाकांक्षा ही वह मूल पूंजी होगी, जिसके बल पर हिन्दी राष्ट्र भाषा के रूप में अपने को विकसित कर सकेगी। जो लोग जोर-जबर्दस्ती से हिन्दी को प्रादेशिक भाषाओं पर लादना चाहते हैं, वे हिन्दी के शुत्र हैं। बेनीपुरी जी अपने साहित्य में राष्ट्रभाषा के महत्त्व को भी प्रतिपादित किया है। साथ ही भाषिक निर्माण पर भी चर्चा की है।

Hill Quest: A Multidisciplinary, National Peer-Reviewed Journal
ISSN 2454-3144 | Volume 10, Issue 01, January-June 2023
http://hillquest.pratibha-spandan.org
© The Author(s) 2023

निष्कर्ष

अतः हम कह सकते हैं कि आधुनिक शिक्षा नीति का निर्माण भाषिक दायित्वों को ध्यान में रखते हुए किया गया है। बेनीपुरी जी ने अपने साहित्य में भारतीय भाषाओं व लोकभाषा के महत्त्व को तो सिद्ध किया ही है साथ ही भाषा के निर्माण व उसके संरक्षण के साथ ही पाठ्यक्रम में उसकी उपयोगिता व महत्त्व पर भी चर्चा की है। आज के परिवेश में व्यक्ति आधुनिक हो चुका है। अतः अपनी से दूर हो गया है। इसमें सबसे की भूमिका हमारी शिक्षा नीति की रही है। अतः शिक्षा-नियामकों को पुनः आधार की ओर लौटना होगा। आज के परिवेश में यह तथ्य सत्य सिद्ध होता प्रतीत हो रहा है।

सन्दर्भ

शर्मा, सुरेश (संपा.): बेनीपुरी ग्रन्थावली, भाग-3,
पूर्वोद्धत पाण्डेय, लक्ष्मीकांत (संपा.): नव-निकष (मासिक पत्रिका), पृ.सं.-45
मिश्र, विद्यानिवास: कौन तू फुलवा बीननिहारी, रंजनहीन जीवन, पृ.सं.-37
शर्मा, सुरेश (संपा.): बेनीपुरी ग्रन्थावली, मैथिली साहित्य, भाग-3, पृ.सं.-29
शर्मा, सुरेश (संपा.): बेनीपुरी ग्रन्थावली, सभी भारतीय भाषाओं की जय, भाग-3, पृ.सं.-171